सहमत मुक्तनाद

वर्ष:5 अंक:4-6 अप्रैल-जून 2003

भीष्म साहनी

8 अगस्त 1915 - 11 जुलाई 2003

सहमत मुक्तनाद

वर्ष: 5 अंक: 4 - 6

अप्रैल - जून 2003

यह अंक 35 रु.

वार्षिक सदस्यता 150 रु.

संरक्षक मण्डल:

इरफान हबीब

सुवीरा जायसवाल

हबीब तनवीर

संपादन:

राजेन्द्र शर्मा

संपादकीय व प्रबन्ध कार्यालय:

सहमत

8 विट्ठलभाई पटेल हाऊस

रफी मार्ग, नई दिल्ली - 110 001

फोन: 23711276, 23351424

संपादन और प्रकाशन पूर्णत: अवैतनिक टिप्पणियों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं जिनसे संपादक/प्रकाशक का सहमत होना जरूरी नहीं है।

सारे भुगतान चैक या बैंक ड्राफ्ट से **सहमत** के नाम से किए जाएं।

अनुक्रम

1 **संपादकीय**
तानाशाही ताम-झाम है

3 **स्मरण**
बीसवीं सदी के भीष्म

4 **राधेश्याम दुबे**
भीष्म साहनी : एक अनोखा व्यक्तित्व

5 **प्रभात पटनायक**
एक दशक प्रतिक्रिया का

14 **अनिल नोरिया**
विस्मरण बनाम स्मरण

18 **डा० सूरजभान**
बाबरी मस्जिद से पहले भी वहां मस्जिद ही थी

20 **जन्मभूमि शिलालेख**
किस्सा एक और केसरिया फर्जीवाड़े का

23 **सहमत का बयान**
इतिहास पर हमला बराबर जारी है

27 **जवरीमल्ल पारख**
अयोध्या से गुजरात तक हिन्दी कविता

32 **राजेश जोशी**
हिन्दी की आड़ में हिन्दुत्व की राजनीति

34 **नलिनी तनेजा**
वृहत्तर राजनीतिक निहितार्थ

37 **नवनिधि कौर**
मुंबई: दंगों के एक दशक बाद

42 **रामसुजान अमर**
बाबरी मस्जिद विध्वंस और न्यायिक प्रक्रिया से छेड़छाड़

44 **शिव कुमार मिश्र**
वे दोस्ती से डरते हैं

47 **एजाज़ अहमद**
लड़ाई तो अभी होनी है

53 **जॉन पिल्जर**
बुश का वियतनाम

56 **राबर्ट फिस्क**
इराक में चार दिन

60 **राजेंद्र शर्मा**
हत्यारा कौन : लू/बारिश/शीत या गरीबी ?

64 **डा० चक्रपाल सिंह**
योग्यता बनाम आरक्षण के दर्शन की दरिद्रता

71 **जवरीमल्ल पारख**
'कैस' का यह कैसा झगड़ा ?

76 **सहमत: अनवरत सक्रियता के पंद्रह वर्ष**

संपादकीय

तानाशाही ताम-झाम है

वाजपेयी सरकार के खिलाफ चार वर्ष में आए पहले ही अविश्वास प्रस्ताव पर बहस में अगर सत्तापक्ष ने सबसे बड़ी विपक्षी पार्टी, कांग्रेस के खिलाफ ब्रह्मास्त्र की तरह इमर्जेंसी की दुहाई का इस्तेमाल करने की कोशिश की, तो यह अचरज की बात नहीं है। बहरहाल, अचरज की बात यह भी नहीं है कि यह दुहाई भी भावपा के नेतृत्ववाली सरकार को कोई लोकतांत्रिक वैधता नहीं दिला सकी। उल्टे इमर्जेंसी राज में माफियां मांगने का मामला उछलने से सबसे ज्यादा भाजपा की ही किरकिरी हुई। यह अब किसी से छुपा हुआ नहीं है कि संघ परिवार से जुड़े अनेक संगठनों के प्रमुख नेताओं के व्यक्तिगत रूप से माफियां मांगकर तानाशाही के दमनचक्र से अपनी जान बचाने की कोशिश की थी। इससे भी महत्वपूर्ण यह कि खुद राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरसंघचालक ने अपने संगठन पर लगायी गयी पाबंदी उठाने के लिए इंदिरा गांधी की सरकार को मनाने की कोशिश में आचार्य विनोबा भावे की सेवाएं ली थीं और इस सिलसिले में इमर्जेंसी के पालन में सरकार को अपना पूरा सहयोग देने के अनेक वचन भी दिए थे। सच तो यह है कि आर एस एस के तत्कालीन सरसंघचालक ने, संजय गांधी तथा उनके नेतृत्व में इमर्जेंसी में छेड़े गए पांच सूत्री कार्यक्रम में विशेष रूप से सहयोग देने की, अपने संगठन की ओर से जबर्दस्त इच्छा व्यक्त की थी जबकि संजय गांधी के सत्ता के अवैधानिक केंद्र के रूप में उभार में और जबरिया नसबंदी से लेकर बुलडोजरों की मदद से शहरों का सौंदर्यीकरण करने तक के उनके कुख्यात कार्यक्रमों में, इमर्जेंसी की कालिख अपने सबसे गहरे रंग में प्रकट हो रही थी। जाहिर है कि बाद में इन अप्रिय सचाइयों को इमर्जेंसी विरोधी संघर्ष की कुर्बानियों का ढोल पीट-पीटकर दबा दिया गया। लेकिन, उस दौर में संघ परिवार के तानाशाही के बुनियादी मिजाज की जो झलक दिखायी दी थी, अब सत्ता में पहुंचने के साथ उसने बाकायदा तानाशाही की मुहिम का रूप ले लिया है।

जैसे इसी मुहिम को शिखर पर पहुंचाते हुए, उप-प्रधानमंत्री आडवाणी ने इस नवंबर तक होने वाले पांच राज्यों के विधानसभाई चुनावों के सिलसिले में अचानक यह एलान कर दिया कि उनकी सरकार, विधानसभा और लोक सभा के चुनाव साथ-साथ कराने पर गंभीरता से विचार कर रही है। और जैसाकि आसानी से अनुमान लगाया जा सकता था, उप-प्रधानमंत्री के सुर में सुर मिलाकर भाजपा के दूसरे अनेक नेताओं ने 'एक साथ चुनाव कराने' की वांछित ही नहीं बहुत ही जरूरी होने के दावे शुरू कर दिए। और जैसे इस प्रस्ताव के पीछे छुपे संवैधानिक व्यवस्था के साथ खिलवाड़ के मंतव्यों की दिशा और स्पष्ट करते हुए, भाजपा अध्यक्ष वेंकैया नायडू ने सार्वजनिक रूप से यह सलाह भी दे डाली कि विधानसभाओं के तथा लोकसभा के चुनाव साथ-साथ कराने के लिए, वर्तमान लोकसभा का कार्यकाल भी बढ़ाया जा सकता है। इमर्जेंसी के बाद ऐसा विचार भी पेश करने की किसी सत्ताधारी राजनीतिक नेता की हिम्मत तो नहीं पड़ी थी। इमर्जेंसी में ही पहली और आखिरी बार, लोकसभा का कार्यकाल पांच साल से आगे बढ़ाया गया था। बेशक, आगे चलकर सबसे बढ़कर मुख्य चुनाव आयुक्त ने इन मंसूबों पर पानी फेर दिया और भाजपा को इस प्रस्ताव से हाथ खींचना पड़ा। फिर भी सत्ताधारी गुट के शिखर नेताओं के गंभीरता से ऐसा प्रस्ताव करने के संकेत बिल्कुल स्पष्ट हैं। इतना ही नहीं, संवैधानिक-राजनीतिक व्यवस्था के साथ इस तरह छेड़छाड़ करने के लिए पेश किए जा रहे कारणों की, इमर्जेंसी के लिए पेश किए कारणों से अनिष्टकर समानता है। उस समय कहा जा रहा था कि सरकार के विरोधी, जनता को भ्रमित कर सरकार के जनहितकारी कदमों का रास्ता रोक रहे हैं। अब उप-प्रधानमंत्री कह रहे हैं कि बार-बार चुनाव होने से सरकारें को बराबर जनता की प्रतिक्रिया की चिंता लगी रहती है और इसके चलते सरकारें कड़े कदम नहीं उठा पाती हैं। यह प्रगति का रास्ता रोक रहा है। प्रगति के लिए जनतंत्र की काट-छांट करना जरूरी है!

इसीलिए, वाजपेयी राज की अघोषित इमर्जेंसी इंदिरा गांधी की घोषित इमर्जेंसी से अपने चरित्र में बहुत भिन्न नहीं है। अचरज नहीं कि इस नयी इमर्जेंसी में पोटा के रूप में उन काले कानूनों की वापसी हुई है, जिन्हें इमर्जेंसी के फौरन